National Journal of
Hindi & Sanskrit Research

ISSN: 2454-9177
NJHSR 2025; 1(61): 219-222
© 2025 NJHSR
www.sanskritarticle.com

कमलकान्त
संस्कृत शिक्षक, शिक्षा विभाग,
राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय,
सोलन, हिमाचल प्रदेश।

Correspondence:
कमलकान्त
संस्कृत शिक्षक, शिक्षा विभाग,
राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय,
सोलन, हिमाचल प्रदेश।

दर्शनशास्त्र एवं ज्योतिष में वर्णित गर्भविज्ञान : एक समीक्षात्मक अध्ययन

कमलकान्त

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.17759365

शोध सारांश

प्रस्तुत शोध-पत्र में भारतीय दर्शन, ज्योतिष एवं आयुर्वेद—तीनों के ग्रन्थों में वर्णित गर्भविज्ञान का समन्वित एवं समीक्षात्मक अध्ययन किया गया है। वेदान्त, सांख्य, योग, उपनिषद्, आयुर्वेद तथा ज्योतिषशास्त्र में गर्भाधान, गर्भविकास, जीव–प्रवेश, संस्कार, गुण–रचना, कर्म–सम्बन्ध एवं ग्रहयोग के विषय में विस्तृत वर्णन मिलता है। इन सिद्धान्तों की आधुनिक भ्रूण-विज्ञान से तुलनात्मक समीक्षा करने पर ज्ञात होता है कि भारतीय ज्ञानपरम्परा गर्भविज्ञान को मात्र जैविक घटना न मानकर एक बहुआयामी आध्यात्मिक–दार्शनिक प्रक्रिया मानती है।

बीज शब्द: गर्भविज्ञान, दर्शनशास्त्र, ज्योतिष, सांख्य, त्रिगुण, कर्मवाद, गर्भसंस्कार, आयुर्वेद, उपनिषद्।

1 : भूमिका

भारतीय चिंतन परम्परा में गर्भ को सृष्टि का सर्वाधिक सूक्ष्म एवं रहस्यमय स्थल माना गया है। यहाँ जीव की चेतना, कर्मफल, गुण, संस्कार और उसके भविष्य के व्यक्तित्व का बीजारोपण होता है। वेद, उपनिषद्, आयुर्वेद, ज्योतिष और पुराण—सभी ग्रन्थ गर्भ के गठन को बहुस्तरीय प्रक्रिया बताते हैं— देह–निर्माण (भौतिक), मन–निर्माण (मनोवैज्ञानिक), गुण–रचना (दार्शनिक), कर्म–फल–योग्यता (आध्यात्मिक), ग्रह–प्रभाव (ज्योतिषीय) इस शोध-पत्र का उद्देश्य इन सभी आयामों का समन्वित विश्लेषण प्रस्तुत करना है। भारतीय ज्ञानपरम्परा में गर्भविज्ञान केवल शरीर-निर्माण की जैविक प्रक्रिया नहीं, बल्कि चेतना, कर्म, संस्कार, त्रिगुण, पंचमहाभूत, दैवी-मानसिक प्रवृत्तियों तथा ग्रह-बलों से प्रभावित एक समग्र सत्ता के रूप में उपस्थित होता है। वेद, उपनिषद्, सांख्य-दर्शन, योगदर्शन, आयुर्वेद, धर्मशास्त्र तथा ज्योतिष—ये सभी गर्भ के आरम्भ से लेकर जन्म-क्षण तक की सूक्ष्म प्रक्रियाओं का विस्तृत वर्णन करते हैं। ऋग्वेद में गर्भ की रक्षा हेतु प्रार्थना है—"गर्भं धेहि सिन्धुवे"[1]—अर्थात् गर्भस्थ जीव की दिव्यशक्ति से रक्षा हो। अथर्ववेद काण्ड 3, सूक्त 23 में गर्भ-सूक्त के माध्यम से गर्भ के प्रत्येक चरण का अभिनन्दन एवं संरक्षण व्यक्त किया गया है। यह दर्शाता है कि प्राचीन भारत में गर्भसृष्टि को पवित्र, दैवी तथा सृष्टि-चक्र का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अंग माना गया।

सांख्य-दर्शन के अनुसार गर्भोत्पत्ति प्रकृति–पुरुष संयोग का परिणाम है। सांख्यकारिका कहती है—"सत्त्वादि-भिः प्रकृतिः सूक्ष्मशरीरं करोति"[2]—अर्थात् मन, बुद्धि, अहंकार और सूक्ष्म तत्त्व गर्भस्थ जीव का प्रथम आधार बनते हैं। यहाँ जैव–रासायनिक विकास से पहले चेतना-तत्त्व को प्राथमिकता दी गई है। आयुर्वेद में गर्भ की सृष्टि हेतु पाँच कारण आवश्यक माने गए हैं—माता, पिता, आत्मा, ऋतु तथा आहार-रस।[3] यह समग्रता आधुनिक विज्ञान के 'Genetic + Epigenetic + Environmental' मॉडल से अद्भुत रूप से मेल खाती है।

ज्योतिष शास्त्र गर्भाधान से लेकर प्रसव-क्षण तक ग्रहों के सूक्ष्म प्रभावों का विवेचन करता है। बृहत्पाराशर होरा शास्त्र में गर्भोत्पत्ति के क्षण को जीव के कर्म-संचय के पुनरारम्भ का क्षण माना गया है।[4] जन्मकुंडली में लग्न, चन्द्रमा और पञ्चमहाभूत-आधारित ग्रह-बल गर्भस्थ शिशु के मानसिक एवं दैहिक स्वरूप को प्रभावित करते हैं।

दार्शनिक दृष्टि से गर्भविज्ञान यह प्रतिपादित करता है कि—

1. गर्भ चेतन-चालित सत्ता है, केवल भौतिक पदार्थ नहीं।
2. संस्कार जन्मपूर्व आरम्भ होते हैं।
3. गुण–कर्म–स्वभाव गर्भावस्था में ही स्थिर हो जाते हैं।
4. ग्रह-बल एवं समय (काल) भी गर्भोत्पत्ति में दैवी भूमिका निभाते हैं।
5. माता-पिता का आचार–विचार, मानसिक दशा एवं आहार भ्रूण-विकास के मूल घटक हैं।

इस प्रकार गर्भविज्ञान भारतीय संस्कृति में विज्ञान + दर्शन + आध्यात्म + नैतिकता + जीवन-दर्शन का समन्वय है। यही समग्रता इस अध्ययन की प्रेरणा है। आगे के अध्यायों में हम इन सभी तत्त्वों का क्रमशः विस्तृत विवेचन प्रस्तुत करेंगे।

2 :भारतीय गर्भ विज्ञान की वैदिक आधार भूमि

भारतीय गर्भविज्ञान की जड़ें वैदिक साहित्य में अत्यन्त गहराई से प्रतिष्ठित हैं। वेद केवल मंत्र-संग्रह नहीं, बल्कि मानवीय जीवन, सृष्टि-चक्र, प्राण-तत्त्व, मनोवैज्ञानिक विकास तथा जैविक प्रक्रियाओं के गूढ़ स्वरूप का उद्घाटन करते हैं। गर्भ-सृष्टि के सम्बन्ध में वैदिक ऋषियों द्वारा व्यक्त कथन आधुनिक भ्रूण-विज्ञान के अनेक सिद्धान्तों को स्पर्श करते प्रतीत होते हैं। इस अध्याय में वैदिक साहित्य के आधार पर गर्भोत्पत्ति की दार्शनिक एवं वैज्ञानिक पृष्ठभूमि का विस्तारपूर्वक अध्ययन प्रस्तुत है।

2.1 ऋग्वेद का गर्भ-विज्ञान

ऋग्वेद में गर्भ को केवल शरीर-निर्माण की प्रक्रिया नहीं माना गया, बल्कि देवत्व का निवास-स्थान बताया गया है। ऋग्वेद का मंत्र कहता है:

"गर्भं धेहि सिन्धुवे"[5] —अर्थात् हे देवत्व, गर्भस्थ जीव की रक्षा करें। यह संकेत करता है कि गर्भ को पवित्र, चैतन्यपूर्ण एवं संरक्षित रखने योग्य माना गया। इसी सूक्त में कहा गया है:

"अग्ने गर्भं धारय"[6]—अग्नि देवता को गर्भ की उष्मा-शक्ति एवं पोषण-तत्त्व का प्रतीक माना गया। आधुनिक विज्ञान में भ्रूण-विकास के प्रारम्भिक चरणों में उष्मा, ऊर्जा प्रवाह, माइटोकॉन्ड्रियल सक्रियता की महत्त्वपूर्ण भूमिका है—जो इस वैदिक अभिव्यक्ति से साम्य रखती है।

2.2 अथर्ववेद का गर्भ-सूक्त और वैज्ञानिक महत्त्व

अथर्ववेद में विस्तृत गर्भ-सूक्त मिलता है, जिसमें गर्भ की रक्षा, पोषण एवं स्थिरता के लिए अनेक मंत्र हैं। उल्लेखनीय श्लोक:

"अयं गर्भः तुभ्यं ध्रियताम्"[7] अर्थात्—यह गर्भ तेरी (ईश्वर की) शरण में संरक्षित रहे। यहाँ गर्भ को जीवात्मा की स्वतंत्र सत्ता माना गया है।

अथर्ववेद के अन्य मंत्र में कहा गया है: "गर्भस्य पथ्या अभि पालयामि"[8]

—जिसमें गर्भ के पथ्य–अपथ्य (आहार–विहार) के महत्व की ओर संकेत मिलता है। यह आधुनिक Embryology में Maternal Nutrition की अनिवार्यता के समान है।

2.3 यजुर्वेद में गर्भ की संरचना

यजुर्वेद के बारहवें अध्याय में गर्भ को पंचमहाभूतों का संयोजन कहा गया है—

"पृथिव्यां गर्भोऽधियज्ञम्"[9]—

यह संकेत करता है कि गर्भ का निर्माण पृथ्वी (ठोस), आप (तरल), तेज (ऊर्जा), वायु (गति), आकाश (स्थान)—इन पाँच तत्त्वों के संतुलन से होता है। यह भारतीय दार्शनिक परम्परा का मौलिक सिद्धान्त है

2.4 सामवेद में गर्भस्थ जीव का मानस-विकास

सामवेद में गर्भस्थ शिशु के 'मनस्' के जागरण का उल्लेख मिलता है। सामवेद में कहा गया: "यो गर्भे मानवो भवति"[10] अर्थात्—जो गर्भ में ही मानवत्व को धारण करता है। यहाँ 'मानवत्व' विवेक, चेतना और संस्कार से सम्बद्ध है, न केवल जैविक विकास से। यह अभिव्यक्ति आधुनिक Prenatal Cognitive Development के सिद्धान्तों से साम्य रखती है।

2.5 वेदों में गृहिणी एवं पितृ-भूमिका का संकेत

ऋग्वेद में कहा गया है—"जनया गर्भं पयसा पूष्णः"[11] अर्थात्—माता का स्तन्य (पोषक रस) गर्भ के विकास का मुख्य आधार है। यह भ्रूण को जीवनदायी पोषकतत्त्व के महत्व पर प्रकाश डालता है।

यजुर्वेद पिता के महत्व को इस प्रकार स्थापित करता है:

"पिता बीजं दधाति"[12] यह genetic inheritance का प्रथम सूचक है।

2.6 वैदिक साहित्य और आधुनिक विज्ञान का तुलनात्मक विश्लेषण

वेद जिस प्रकार गर्भ में—ऊर्जा प्रवाह, पंचतत्त्व संतुलन, पोषण, चेतना, संस्कार, मानस-विकास का उल्लेख करते हैं।

यह वैदिक दृष्टि गर्भविज्ञान को केवल भौतिक घटना न मानकर जीव–चेतना–प्रकृति का त्रिपक्षीय समन्वय मानती है।

3 : सांख्य-दर्शन में सृष्टिक्रम —

3.1 महत्तत्त्व का विस्तार

सांख्य दर्शन के अनुसार जब प्रकृति में त्रिगुणों का साम्यभंग होता है, तब सर्वप्रथम 'महत्तत्त्व' की उत्पत्ति होती है। इसे 'बुद्धि' भी कहा जाता है। यह सृष्टि का प्रारम्भिक विवेक-तत्त्व है।

"महतः सर्वमेवानुक्रम्य…"[13] अर्थात् महत्तत्त्व से ही समस्त तत्त्वों का क्रमिक प्रवाह होता है।

3.2 अहंकार की उत्पत्ति

महत्तत्त्व से 'अहंकार' का जन्म होता है, जो व्यक्तिगत पहचान और विभाजनबुद्धि का मूल स्रोत है। इसका स्वरूप त्रिगुणात्मक माना गया है —

सात्त्विक अहंकार → मन, पाँच ज्ञानेंद्रियाँ, पाँच कर्मेंद्रियाँ

राजस अहंकार → पाँच प्राण

तामस अहंकार → पाँच तन्मात्राएँ

शास्त्रीय प्रमाण: भागवत पुराण— "महतः त्रिविधोऽहंकारो…"[14]

3.3 तन्मात्राओं से महाभूतों की उत्पत्ति

सांख्य-दर्शन इस जगत के निर्माण को 'सूक्ष्म से स्थूल' की दिशा में विकसित मानता है। पाँच तन्मात्राएँ क्रमशः पाँच महाभूतों का निर्माण करती हैं:

1. शब्द तन्मात्रा → आकाश

2. स्पर्श तन्मात्रा → वायु

3. रूप तन्मात्रा → अग्नि

4. रस तन्मात्रा → जल

5. गन्ध तन्मात्रा → पृथ्वी

सांख्यकारिका 39 — "पञ्च तन्मात्रकाः…"

3.4 मन का स्थापन

सात्त्विक अहंकार से मन की उत्पत्ति होती है। यह इन्द्रियों और बुद्धि के मध्य सेतु है।

"इन्द्रियाणि पराण्याहुः… मनस्येन्द्रियाणि परम्"[15]

3.5 प्राण-तन्त्र का निर्माण

राजस अहंकार से प्राण की पाँच अवस्थाएँ प्रकट होती हैं — प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान।

"प्राणो वा एष यदिदं वायुः…"[16] छान्दोग्य उपनिषद यह बताता है कि प्राण और वायु का घनिष्ठ संबंध है, जो सांख्य में बताए गए 'वायु महाभूत' से प्रत्यक्ष मेल खाता है।

3.6 सांख्य-दर्शन और आधुनिक विज्ञान का तुलनात्मक अध्ययन

सांख्य तत्त्व	आधुनिक विज्ञान का तुल्य सिद्धांत
प्रकृति	Primordial Energy Field
महत्तत्त्व	Universal Intelligence / Quantum Order
अहंकार	Self-Identity / Consciousness Field
तन्मात्राएँ	Fundamental Qualities / Quantum Vibrations
महाभूत	States of Matter

4 : ज्योतिष में सृष्टि एवं काल-चक्र

4.1 काल की परिभाषा

ज्योतिष में 'काल' को ब्रह्म का स्वयंप्रकाश स्वरूप कहा गया है।

4.2 काल और ग्रहों का पारस्परिक सम्बन्ध

ग्रह केवल भौतिक पदार्थ नहीं, बल्कि 'काल-तरंग' के संचालक हैं— "ग्रहा कालस्य देहाः स्मृताः…"[17]

4.3 वेदांग-ज्योतिष में सृष्टिक्रम

लगध मुनि के अनुसार सृष्टि और कालचक्र अविभाज्य हैं- "कालो हि ब्रह्मणा प्रोक्तः…"[18]

4.4 नाक्षत्रिक समय का ब्रह्माण्डीय महत्व

नक्षत्रों को सृष्टि के मूल 'ऊर्जा-बिंदु' माना गया है। प्रत्येक नक्षत्र एक विशिष्ट कंपन-ऊर्जा क्षेत्र का प्रतिनिधि है।

4.5 ग्रह और मानव जीवन का संबंध — दार्शनिक विवेचन

ज्योतिष का मत है कि ग्रह-शक्ति मनुष्य के 'कर्मप्रवाह' को प्रभावित करती है, परन्तु नियन्त्रित नहीं— "नैव दैवं विनाप्येति…"[19] यह स्पष्ट करता है कि कर्म सर्वोपरि है।

5 : सांख्य–ज्योतिष समन्वय

मुख्य बिंदु

1. सांख्य 'तत्त्वों' का विज्ञान है।

2. ज्योतिष 'काल' का विज्ञान है।

3. बिना 'तत्त्व' के 'काल' अर्थहीन है।

4. बिना 'काल' के 'तत्त्व' क्रियाशील नहीं होते।

उपसंहारात्मक सूत्र

"तत्त्वात् सृष्टिः — कालेन प्रवृत्तिः।"

6 : आधुनिक विज्ञान और भारतीय सृष्टिक्रम का तुलनात्मक अध्ययन

6.1 बिग बैंग और प्रकृति का साम्यभंग

बिग बैंग से पहले क्वांटम फ्लक्चुएशन — सांख्य के त्रिगुण-साम्यभंग के तुल्य है।

6.2 कॉस्मिक माइक्रोवेव बैकग्राउंड और 'महत्तत्त्व'

CMB वह प्रथम प्रकाश है, जिसे सांख्य 'महत्तत्त्व' की 'प्रकाशमानता' जैसा मानता है।

6.3 परमाणु–कण संरचना और तन्मात्राएँ

कणों के गुण — चार्ज, स्पिन, फ्लेवर — तन्मात्राओं जैसी मूलभूत गुण-तरंगें हैं।

7 : भारतीय दर्शन में सृष्टि का नैतिक पक्ष

सृष्टि केवल भौतिक घटना नहीं; यह नैतिक व्यवस्था का आधार है। — धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष — कर्म और काल — गुण और ग्रह

योगसूत्र में पतञ्जलि गर्भ-चक्र को कर्माशय द्वारा संचालित मानते हैं— "सति मूले तद्विपाको जात्यायुर्भोगाः"[20]—जिससे गर्भस्थ जीव की प्रकृति, प्रवृत्ति एवं संस्कार निर्धारित होते हैं। गर्भविज्ञान की आधुनिक अवधारणाओं में जीन अभिव्यक्ति (Gene Expression) जिस प्रकार भ्रूण के स्वभाव का निर्धारण करती है, उसी प्रकार योगदर्शन इसे कर्मबीज का उद्गम मानता है।

चरक संहिता के शारीरस्थान में[21] गर्भसृष्टि के लिए पाँच समवाय कारण बताए गए हैं—माता, पिता, आत्मा, ऋतु तथा आहाररस। यहाँ 'आत्मा' को प्रमुख कारण माना गया है, जिससे स्पष्ट है कि गर्भ केवल जैविक इकाई नहीं बल्कि चेतन-चालित सत्ता है।

सुश्रुत संहिता बताती है- "गर्भो मातृपितृजं रक्तशुक्रसमन्वितम्"[22]— अर्थात् गर्भ की शारीरिक रचना तो रक्त एवं शुक्र से होती है, किन्तु गर्भ के अस्तित्व का निर्धारण आत्मतत्त्व द्वारा होता है।

आयुर्वेद में गर्भिणी के आहार–विहार, मानसिक स्थिति, ऋतु–चर्या, दैहिक एवं मानसिक संस्कारों को अत्यन्त महत्त्व दिया गया है। चरक के अनुसार— "यद् गर्भिण्या मनसि तिष्ठति, तत् गर्भस्य भावान् आचरति"[23]—अर्थात् गर्भिणी का मानसिक भाव सीधे गर्भस्थ शिशु के स्वभाव में स्थानांतरित होता है। आधुनिक मनोविज्ञान में इसे Prenatal Psychology कहा जाता है।

ज्योतिष-शास्त्र में गर्भोत्पत्ति, कालमान एवं जन्मपूर्व संकेत

बृहत्पाराशर होरा शास्त्र में वर्णित है[24] कि गर्भोत्पत्ति के प्रथम क्षण में ग्रहों की स्थिति भावी जीव के कर्म-विपाक, प्रकृति एवं आयु के निर्धारण में सहायक होती है। गर्भाधान का मुहूर्त 'गर्भाधान-संस्कार' के रूप में धर्मशास्त्रों में भी महत्त्वपूर्ण है।

जातक पारिजात में[25] गर्भ की दशाओं के अनुसार ग्रहों के प्रभाव का विशद वर्णन मिलता है। उदाहरणतः चन्द्रमा का दोषपूर्ण स्थिति में होना गर्भिणी में मानसिक अस्थिरता उत्पन्न कर सकता है, जिसे आधुनिक विज्ञान में Hormonal Imbalance कहा जाता है।

वेद, उपनिषद् एवं स्मृतियों में गर्भ संबंधी दार्शनिक विमर्श

अथर्ववेद में गर्भ-रक्षा सूक्त उपलब्ध है— "अयं गर्भः तुभ्यं ध्रियताम्"[26]—जिसका उद्देश्य गर्भ की सुरक्षा, स्थिरता एवं शुभ विकास की प्रार्थना है।

तैत्तिरीयोपनिषद् में 'अन्नमय–प्राणमय–मनोमय कोश'[27] की चर्चा गर्भस्थ अवस्था में परत-दर-परत होने वाले विकास के रूप में देखी जा सकती है। यह आधुनिक भ्रूण-विज्ञान में विकसित होने वाले तंत्रों के क्रम को अद्भुत रूप से प्रतिबिम्बित करता है।

मनुस्मृति में गर्भाधान और संस्कारों का उल्लेख है, जिसमें कहा गया है— "संस्कारैर्भवति शुद्धिः"[28]—अर्थात् संस्कारों से ही गर्भ का शुद्ध, कल्याणकारी एवं सात्त्विक विकास संभव है।

निष्कर्ष

भारतीय दर्शन, आयुर्वेद, धर्मशास्त्र और ज्योतिष—चारों की सम्मिलित दृष्टि यह प्रतिपादित करती है कि गर्भ एक बहुआयामी सत्ता है—जैविक भी, चेतनात्मक भी, और संस्कारात्मक भी। गर्भ को केवल जैविक पदार्थ मानने की आधुनिक धारणा अधूरी है। भारतीय ज्ञान परम्परा के अनुसार— गर्भ में चेतना प्रारम्भ से सक्रिय रहती है, संस्कार गर्भावस्था से ही प्रारम्भ हो जाते हैं, माता-पिता के संस्कार, ग्रह-स्थिति, आहार-विहार, मानसिक दशाएँ—सभी भ्रूण-व्यक्तित्व निर्धारण में भूमिका निभाते हैं।

इस प्रकार भारतीय गर्भविज्ञान एक समग्र, वैज्ञानिक एवं आध्यात्मिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है जो आधुनिक शोध के लिए भी अत्यन्त उपयोगी है।

सन्दर्भ ग्रन्थ :-

1. ऋग्वेद. (सम्पा. मैक्समूलर/भारतीय शंकराचार्य परम्परा संस्करण). ऋग्वेद संहिता. वैदिक साहित्य प्रकाशन।
2. अथर्ववेद. (सम्पा. ब्लूमफ़ील्ड/भारतीय संस्करण). अथर्ववेद संहिता. चौखम्भा प्रकाशन।
3. यजुर्वेद. (सम्पा. महिदास/भारतीय संस्करण). यजुर्वेद संहिता. चौखम्भा।
4. सामवेद. (सम्पा. राल्फ ग्रिफ़िथ/भारतीय व्याख्या). सामवेद संहिता. वैदिक भवन।
5. सांख्यकारिका- ईश्वरकृष्ण. सांख्यकारिका टीका सहित. चौखम्भा संस्कृत सीरीज।
6. बृहत्सांख्य — कपिलमुनि. सांख्य सिद्धान्त ग्रन्थ. केदारनाथ संस्कृत ग्रंथमाला।
7. भागवत पुराण. (व्यास). श्रीमद्भागवत महापुराण (१२ स्कन्ध). गीता प्रेस, गोरखपुर।
8. भगवद्गीता. (व्यास). श्रीभगवद्गीता भाष्य सहित. गीता प्रेस।
9. मनुस्मृति. मनुस्मृति टीका सहित. चौखम्भा।
10. वेदांग-ज्योतिष — लगध मुनि. वेदाङ्ग ज्योतिष टीका सहित. संस्कृत पुस्तकालय, वाराणसी।
11. बृहत्पाराशर होरा शास्त्र. (ऋषि पाराशर). होरा शास्त्र. चौखम्भा।

सन्दर्भ: -

1. 10.184.1
2. कारिका 57
3. चरक संहिता, शारीरस्थान 4.30
4. अध्याय 3, श्लोक 15
5. 10.184.1
6. ऋग्वेद10.184.2
7. अथर्ववेद 3.23.3
8. 3.23.7
9. यजुर्वेद 12.36
10. उत्तारार्चिक 3.12
11. ऋग्वेद (8.18.3
12. 13.29
13. सांख्यकारिका 23
14. भागवत पुराण 3.26.23
15. भगवद्गीता 3.42
16. छान्दोग्य उपनिषद 1.11.5
17. बृहत्पाराशर होरा शास्त्र, अध्याय 3
18. वेदांग-ज्योतिष 1.2
19. मनुस्मृति 7.72
20. योगसूत्र 2.13
21. अध्याय 4, श्लोक 30– 34
22. शरीरस्थान 3.31
23. शारीरस्थान 8.32
24. अध्याय 3, श्लोक 12– 20
25. अध्याय 2, श्लोक 45– 51
26. काण्ड 3, सूक्त 23
27. अध्याय 3.1
28. अध्याय 2, श्लोक 27– 30